इकाई 9 समास प्रकरण – भाग 1

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 समास तथा उसके भेद

9.3 समास –"समर्थः पदविधिः" सूत्र से "झयः" सूत्र पर्यन्त

9.4 कतिपय उदाहरणों की रूपसाधन–प्रक्रिया

9.5 सारांश

9.6 शब्दावली

9.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

9.8 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

9.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- समास की परिभाषा के बारे में जानेंगें।
- समास के भेदों के बारे में जान पाएँगे।
- व्याकरणशास्त्र में प्रसिद्ध पाँच वृत्तियों में एक प्रकार समास का है।
- वृत्ति का स्वरूप, विग्रह वाक्यादि का निर्वचन भी ज्ञात होगा।
- किसी भी विशेष संज्ञा से विनिर्मुक्त केवल समास का ज्ञान प्राप्त करने में समर्थ हो सकेंगे।
- अव्ययीभाव प्रकरण के सूत्रों को विस्तार से सोदाहरण विवेचन के साथ पढ़ेंगे।
- अव्ययीभाव समास के विभिन्न उदाहरणों को रूपसिद्धि प्रक्रिया के माध्यम से सिद्ध करने में समर्थ हो सकेंगे।

9.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रों आपके पाठ्यक्रमानुसार इस इकाई में आपको समास प्रकरण के बारे में अध्ययन करना है। इस इकाई में सर्वप्रथम आपको पाठ के आरम्भ में समास के बारे में बताया जाएगा। उसके बाद समास के भेदों का विवेचन संज्ञा निर्देश के साथ संक्षेप में किया जाएगा। विभागशः प्रत्येक विशेष संज्ञा से संज्ञित समास तथा उसका विधान करने में सहायक सूत्रों का विवेचन अग्रिम पाठों में विस्तार से किया जाएगा। फलतः प्रस्तुत पाठ में आप केवलसमास (जो कि तत्पुरुष आदि संज्ञाओं से बहिर्भूत है) तथा अव्ययीभाव समास के बारे में अध्ययन करेंगें। साथ ही केवलसमास तथा अव्ययीभाव समास से सम्बन्धित उदाहरणों का विवेचन भी रूप साधन प्रक्रिया के माध्यम से आप कर पाएँगें।

9.2 समास तथा उसके भेद

समसनं समासः ऐसी परिभाषा लघुसिद्धान्तकौमुदी में दी गई है। सम् –उपसर्गपूर्वक असुँ क्षेपणे धातु से भाव में घञ् (अ) प्रत्यय कर घञ् के ञित्त्व के कारण "अत उपधायाः" से उपधावृद्धि करने पर 'समास' शब्द निष्पन्न होता है। संक्षेप, संक्षिप्तीकरण या मिलाने को समास कहते हैं। यह शब्द व्याकरण में योगरूढ या पारिभाषिक माना गया है। अतः प्रत्येक संक्षेप को समास नहीं कहते, अपितु जब दो या दो से अधिक पद मिल कर एक पद हो जाते हैं तो उसे समास कहते हैं। समास हो जाने पर उन समस्यमान पदों की प्रायः अपनी–अपनी विभक्तियां लुप्त हो जाती हैं (परन्तु उन का अर्थ तो रहता ही है)। पुनः नये सिरे से समास को एक शब्द या प्रातिपदिक मान कर नई विभक्ति आती है। तब वह एक प्रकार से नया पद बन जाता है। स्वरप्रक्रिया में तब उसे एकपद समझ कर ही स्वर लगाया जाता है। समास का उदाहरण यथा – गङ्गायाः जलम् = गङ्गाजलम्। यहां 'गङ्गायाः' तथा 'जलम्' इन दो पदों के मिलने से 'गङ्गाजलम्' यह एकपद बन गया है। इसी प्रकार कृष्णं श्रितः – कृष्णश्रितः, हरिणा त्रातः – हरित्रातः, चोराद् भयम् – चोरभयम् इत्यादि स्थलों में समास जानना चाहिये। यह समास पाँच प्रकार का होता है।

1) **विशेषसंज्ञाविनिर्मुक्तः केवलसमासः प्रथमः** – जब समास तो किया जाता है परन्तु उसकी शास्त्र में अव्ययीभाव, तत्पुरुष आदि की तरह कोई विशेष संज्ञा नहीं की गई होती तो उसे केवलसमास ही कहा जाता है। यह समास "सह सुपा" सूत्र से या इसके योग विभाग द्वारा ही सम्पन्न होता है। यथा – पूर्वं भूतः भूतपूर्वः। यहाँ "सह सुपा" से समास तो हुआ है परन्तु उस का कोई विशेष नाम नहीं रखा गया अतः यह केवलसमास ही कहा जायेगा। इसी समास को प्राचीन परम्परा में सुप्सुपासमास नाम से जाना जाता है। यह नाम इस लिये रखा गया है कि इस में एक सुबन्त दूसरे सुबन्त के साथ विशेषनाम के विना समास को प्राप्त होता है। इस समास के अन्य उदाहरण 'वागर्थाविव' इत्यादि हैं। आगे स्पष्ट किये जायेंगे।

2) **प्रायेण पूर्वपदार्थप्रधानः अव्ययीभावः द्वितीयः** – अव्ययीभाव एक अन्वर्थ अर्थात् अर्थानुसारी संज्ञा है। इस समास में प्रायः पूर्वपद अव्यय होता है और उत्तरपद अनव्यय, परन्तु समास होने पर समस्त पद अव्यय बन जाता है। अनव्ययम् अव्ययं भवति – अव्ययीभावः। अव्ययीभावसमास में प्रायः पूर्वपद के अर्थ की प्रधानता होती है। यथा – हरौ इति अधिहरि (हरि में)। यहाँ 'अधि' यह पूर्वपद है जो अधिकरण का द्योतक है, अतः 'अधिहरि' इस समस्त में भी अधिकरण की प्रधानता है। इसी प्रकार कृष्णस्य समीपम् – उपकृष्णम्, शक्तिमनतिक्रम्य – यथाशक्ति इत्यादि उदाहरण हैं।

   यहाँ अव्ययीभाव की परिभाषा में प्रायेण ऐसा कहा है जिससे ज्ञात होता है कि कहीं कहीं पूर्व पदार्थ की प्रधानता नहीं रहती तथापि अव्ययीभाव समास अधिकार के अन्तर्गत होने से उसे अव्ययीभाव कहा जाता है। जैसे – उन्मत्तगङ्गम्, लोहितगङ्गम् इत्यादि। यहाँ उन्मत्ता गङ्गा यस्मिन् सः देशः उन्मत्तगङ्गम् ऐसा विग्रह होने से बहुव्रीहि की तरह अन्यपदार्थ की प्रधानता है।

3) **प्रायेण उत्तरपदार्थ प्रधानः तत्पुरुषसमासः तृतीयः। तत्पुरुषभेदः कर्मधारयः। कर्मधारयभेदो द्विगुः।** "तत्पुरुषः" सूत्र के अधिकार में विहित समास 'तत्पुरुष' कहा जाता है। द्वितीया विभक्त्यन्त से लेकर सप्तमी विभक्त्यन्त तक जिस जिस विभक्त्यन्त का उत्तरपद के साथ समास का विधान किया जाता है वह तत्पुरुषसमास उसी विभक्ति के नाम से व्यवहृत होता है। यथा – 'कष्टं श्रितः कष्टश्रितः' यहाँ द्वितीयातत्पुरुष समास, हरिणा त्रातः हरित्रातः यहाँ तृतीयातत्पुरुषसमास, 'भूताय बलिः भूतबलिः' यहां चतुर्थीतत्पुरुष समास, 'चोराद् भयम् चोरभयम्' यहाँ पञ्चमीतत्पुरुषसमास, 'राज्ञः पुरुषः राजपुरुषः' षष्ठीतत्पुरुष समास तथा 'अक्षेषु शौण्डः – अक्षशौण्डः' यहां सप्तमीतत्पुरुष समास है। इस समास में उत्तरपद के अर्थ की प्रायः प्रधानता होती है। यथा – पुरुषः – राजपुरुषः, यहां षष्ठीतत्पुरुषसमास में उत्तर पद 'पुरुषः' के अर्थ की ही प्रधानता है। यदि कहें कि 'राजपुरुषमानय' (राजपुरुष को लाओ) तो राजसम्बन्धी पुरुष का ही आनयन क्रिया में अन्वय होगा राजा का नहीं, वह तो केवल पुरुष को ही विशिष्ट करेगा।

तत्पुरुषसमास का ही भेद है – कर्मधारयसमास। तत्पुरुषः समानाधिकरणः कर्मधारयः। जब तत्पुरुषसमास में दोनों पदों का वाच्य एक ही हो अथवा जिन दो पदों के वाच्य का अधिकरण समान हो उसे कर्मधारय समास कहते हैं। यथा –नीलमुत्पलम् – नीलोत्पलम् (नीला कमल) इत्यादि।

इस कर्मधारयसमास में जब पूर्वपद संख्यावाचक होता है तो उसे "संख्यापूर्वो द्विगुः" अर्थात् द्विगुसमास कहते हैं यह कर्मधारय के भेद के रूप में जाना जाता है। यथा – पञ्चानां गवां समाहारः – पञ्चगवम्। अन्य उदाहरण त्रिफला, त्रिलोकी आदि।

यहाँ भी 'प्रायेण' इसलिये कहा है कि कहीं–कहीं इस से विपरीत भी पाया जाता है। यथा मालामतिक्रान्तः – अतिमालः, यहाँ माला यद्यपि उत्तरपद है तथापि इस के अर्थ का प्राधान्य नहीं है, पूर्वपद के अर्थ की ही प्रधानता है। इसी प्रकार अर्धपिप्पली, पूर्वकायः, निष्कौशाम्बिः इत्यादि में भी उत्तरपदार्थ की प्रधानता नहीं है तथापि तत्पुरुष समास है।

4) **प्रायेण अन्यपदार्थ प्रधानः बहुव्रीहिः चतुर्थः। बहुव्रीहिः –समास शेषो बहुव्रीहिः** (965) के अधिकार में जिस समास का विधान किया जाता है उसे बहुव्रीहिसमास कहते हैं। इस समास में समस्यमान पदों से भिन्न तत्सम्बद्ध किसी अन्य पद के अर्थ की ही प्रायः प्रधानता होती है। यथा – पीतम् अम्बरं यस्य स पीताम्बरः (पीले कपड़े हैं जिस के वह, अर्थात् श्रीकृष्ण आदि)। यहां पीत और अम्बर पदों से भिन्न अन्य पद के अर्थ की प्रधानता है। समस्यमान पद उस अन्य पद के केवल विशेषण बन कर रह गये हैं। अत एव कहा भी गया है – सर्वोपसर्जनो बहुव्रीहिः (बहुव्रीहिसमास में सब पद उपसर्जन अर्थात् गौण होते हैं)।

यहाँ भी प्रायेण इस पद का प्रयोग इसलिए किया गया है क्योकि द्वित्राः इत्यादि समासों का ग्रहण भी बहुव्रीहि में हो जाए। जबकि द्वौ वा त्रयो वा इस तरह का विग्रह होने से यहाँ उभयपदार्थ प्रधान हैं।

5) **प्रायेण उभयपदार्थप्रधानो द्वन्द्वः पञ्चमः**। 'च' के अर्थ (समाहार तथा इतरेतरयोग) में "चार्थे द्वन्द्वः" सूत्र द्वारा द्वन्द्व समास का विधान किया जाता है। द्वन्द्व समास में दोनों (या दो से अधिक सब) पदों के अर्थों की प्रायः प्रधानता होती है। यथा – हरिश्च हरश्च हरिहरौ। यहां दोनों पदों के अर्थों का प्राधान्य होने से क्रिया में दोनों का ही अन्वय होता है।

यहाँ भी लक्षण में प्रायः शब्द का प्रयोग इसलिए किया क्योंकि इतरेतरयोगद्वन्द्व में ही सभी पदार्थों की प्रधानता होती है। जबकि समाहार द्वन्द्व में समाहार (समूह) की। यथा – दन्ताश्च ओष्ठौ च दन्तोष्ठम् (दाँतों और ओठों का समाहार), तो इस प्रकार से आपको ज्ञात हुआ कि उपर्युक्त जो भी लक्षण समासों के कहे हैं उन सभी में कुछ वैपरीत्य दृष्टिगत होता है और एक समास में किसी दूसरे समास के लक्षण की प्रतीति होती है, इसलिए सभी लक्षणों में प्रायेण/प्रायः ऐसा कह दिया गया।

9.3 समास –"समर्थः पदविधिः" सूत्र से "झयः" सूत्र पर्यन्त

प्रिय छात्रों अब आप यहाँ "समर्थः पदविधिः" सूत्र से लेकर "झयः" सूत्र पर्यन्त आने वालों सूत्रों का अध्ययन क्रमशः करेंगें। जैसा कि प्रस्तावना में हमने आपको बताया कि जो समसनं या संक्षेपीकरण अर्थात् दो या दो से अधिक पदों को मिलाकर एकपद बना देना समास वृत्ति कहलाता है (वृत्ति स्वरूप तथा उसके भेदों का विवेचन आगे इसी पाठ में किया जाएगा)। वृत्ति जो है वह पदसम्बन्धी विधि है और वह समर्थाश्रित होती है। तो पदसम्बन्धी विधि समर्थाश्रित होती है यह बताने वाले सूत्र का विवेचन आपके समक्ष प्रस्तुत करते हैं –

सूत्र – समर्थः पदविधिः 2.1.1

सूत्रवृत्ति – पदसम्बन्धी यो विधिः स समर्थाश्रितो बोध्यः।

सूत्रानुवाद – पदविधि अर्थात् पदसम्बन्धी कार्य (पदों से सम्बन्ध रखने वाला कार्य) समर्थ पदों के आश्रित होता है।

व्याख्या – समर्थः, पदविधिः यह पदच्छेद है। यह द्विपदात्मक सूत्र है। विधीयते इति विधिः = कार्यम्। विपूर्वक डुधाञ् धारण–पोषणयोः धातु से कर्म में उपसर्गे घोः किः सूत्रद्वारा 'कि' (इ) प्रत्यय कर आकार का लोप करने पर 'विधि' शब्द निष्पन्न होता है। विधान किये गये कार्य को विधि कहते हैं। पदानां विधिः – पद विधिः, यहाँ सम्बन्धषष्ठीतत्पुरुषसमासः। 'समर्थः' पद यहाँ 'समर्थाश्रितः' के अर्थ में लाक्षणिक है। पदविधिः = पदों से संबन्ध रखने वाला कार्य (समर्थः) समर्थ पदों के आश्रित होता है। यह एक परिभाषासूत्र है। अतः प्रस्तुत परिभाषा के कारण सम्पूर्ण अष्टाध्यायी में जहां–कहीं पदसम्बन्धी कार्य कहा जायेगा वह कार्य समर्थ पदों के आश्रय पर ही होगा असमर्थ पदों के नहीं। आकाङ्क्षा आदि के वशात् परस्पर सम्बद्धार्थ होना ही पदों का सामर्थ्य है। समास पदसम्बन्धी विधि (कार्य) है क्योंकि इस में एक सुबन्त का दूसरे सुबन्त के साथ योजन होता है अतः प्रकृत परिभाषा द्वारा यह समास समर्थ पदों के आश्रित होगा। जैसे – राज्ञः पुरुषः –राजपुरुषः (राजा का सेवक)। यहां दोनों पद समर्थ हैं, स्वस्वामिभावसम्बन्ध से परस्पर सम्बद्ध हैं अतः यहां समास हो कर 'राजपुरुषः' ऐसा समस्त रूप बन जाता है। परन्तु 'भार्या राज्ञः पुरुषो देवदत्तस्य' (स्त्री राजा की है,

पुरुष देवदत्त का है) यहां 'राज्ञः' और 'पुरुषः' का समास नहीं होता, कारण कि ये दोनों पद परस्पर निरपेक्ष होने से असमर्थ हैं। राज्ञः का सम्बन्ध भार्या के साथ है, न कि पुरुषः के साथ, एवं पुरुषः का देवदत्तस्य के साथ है न कि राज्ञः के साथ। इसी प्रकार पश्यति कृष्णं श्रितो देवदत्तो गुरुकुलम् यहां पर कृष्णं श्रित में समास नहीं होता। 'वस्त्रम् उपगोः अपत्यं देवदत्तस्य' यहाँ उपगोरपत्यम् में "तस्याऽपत्यम" द्वारा तद्धित अण प्रत्यय न होने से 'औपगवः' नहीं बनता। यहाँ ध्यातव्य है कि तद्धित की उत्पत्ति भी प्रायः सुबन्त से ही होती है अतः तद्धितविधि भी पदविधि ही है।

जैसा कि हमने आपको बताया था कि समर्थ पद समर्थाश्रित में लाक्षणिक है उसके अनुसार जिनमें सामर्थ्य हो उनमें ही पदविधि होती है। तो वह सामर्थ्य भी दो प्रकार का होता है –– व्यपेक्षाभावसामर्थ्य और एकार्थीभावसामर्थ्य। वाक्य में व्यपेक्षाभाव सामर्थ्य होता है क्योंकि इस में पद परस्पर अपेक्षा रखा करते हैं। परन्तु समास में एकार्थीभाव (सभी पदों का मिल कर एक अर्थ को कहना) रूप सामर्थ्य होता है। सम्बद्धार्थकों का जब एकार्थीभाव हो जाता है तो पुनः उस एकार्थीभूत अर्थ में पृथक्–पृथक् विशेषणों का योग नहीं हो पाता। यही कारण है कि एकार्थीभूत हुए राजपुरुषः के 'राज्ञः' अंश के साथ 'ऋद्धस्य' आदि विशेषणों का योग हो कर ऋद्धस्य राजपुरुषः इत्यादि प्रयोग नहीं होते। जैसा कि महाभाष्य में कहा गया है – सविशेषणानां वृत्तिर्न, वृत्तस्य वा विशेषणयोगो न।

अन्य एक बात ध्यान देने योग्य है कि यह समर्थपरिभाषा केवल पदविधि के लिये ही है वर्ण विधि आदि में इसकी प्रवृत्ति नहीं होती। इसलिए "तिष्ठतु दध्यानय तक्रम्" इस वाक्य में यहाँ 'दधि आनय' इन परस्पर निरपेक्ष पदों में "इको यणचि" द्वारा यणसन्धि प्रवर्तति होती है।

सूत्र – प्राक्कडारात् समासः 2.1.3

सूत्रवृत्ति – "कडाराः कर्मधारये" इत्यतः प्राक् समास इत्यधिक्रियते।

सूत्रानुवाद – "कडाराः कर्मधारये" इस सूत्र से पहले समास का अधिकार होता है।

व्याख्या – प्राक्, कडारात्, समासः यह पदच्छेद है। यह त्रिपदात्मक सूत्र एक अधिकार सूत्र है। प्राक् यह एक अव्यय पद है। कडारात् पञ्चमी का एकवचन तथा सूत्र की अवधि को दर्शाता है। समासः यह प्रथमान्त है। इस सूत्र का अधिकार "कडाराः कर्मधारये" सूत्र से पूर्व तक होता है। 'कडार' शब्द से "कडाराः कर्मधारये" सूत्र के आद्य अंश का अनुकरण किया गया है। तो इस प्रकार सूत्रार्थ होता है – कडारात् = कडाराः कर्मधारये सूत्र से प्राक् = पूर्व समासः = समास अधिकृत किया जाता है। तात्पर्य यह है कि अष्टाध्यायी में इस प्रस्तुत सूत्र से ले कर "कडाराः कर्मधारये" सूत्र के पूर्व तक समास का विधान किया जायेगा।

एक बिन्दु पर ध्यान देना आवश्यक है कि प्रकृत सूत्र में 'प्राक्' पद की आवृत्ति कर ली जाती है जिसके फलस्वरूप कडाराः कर्मधारये सूत्र से प्राक् (पूर्व) समास संज्ञा करने पर भी किए जा रहे विधान में अव्ययीभावतत्पुरुषादि अन्य संज्ञा का समावेश भी हो जाएगा। जिससे कडाराः कर्मधारये से पूर्व समास–सामान्य संज्ञा को प्राप्त होता हुआ

कार्य अव्ययीभावादिविशेष संज्ञा को भी प्राप्त करेगा। अर्थात् संज्ञाद्वय समावेश इस अधिकार में होगा।

सूत्र – सह सुपा 2.1.4

सूत्रवृत्ति – सुप् सुपा सह वा समस्यते। समासत्वात् प्रातिपदिकन्वेन सुपो लुक्।

सूत्रानुवाद – सुबन्त का सुबन्त के साथ समास होता है।

व्याख्या – सुप्, सुपा, यह पदच्छेद है। यह द्विपदात्मक सूत्र समास विधायक सूत्र है। इसमें "सुबान्मन्त्रिते पराङ्गवत्स्वरे" सूत्र से सुप् पद की तथा "प्राक्कडारात् समासः" सूत्र से समास पद की अनुवृत्ति की जाती है। सुप् जो कि एकवचनान्त है, से सुबन्त का ग्रहण किया जाता है। यह ग्रहण 'प्रत्ययग्रहणे तदन्ता ग्राह्याः' इस परिभाषा से होता है क्योंकि सुप् प्रत्यय का स्वरूप है। जहाँ प्रत्यय का ग्रहण किया हो वहाँ प्रत्ययान्त का ग्रहण किया जाए ऐसा परिभाषार्थ है। इसी प्रकार सुपा जो कि तृतीयान्त है, से सुबन्तेन ऐसा अर्थ होगा। तो इस प्रकार से पूर्ण सूत्रार्थ फलित होगा – सुबन्त का सुबन्त के साथ समास होता है। जैसे सुबन्त 'राज्ञः' का सुबन्त 'पुरुष' के साथ समास होने पर राजपुरुष बनता है। तो यहाँ जो राजन् शब्द का षष्ठ्यन्त राज्ञः है इसकी षष्ठी कहाँ कैसे लुप्त हुई इस जिज्ञासा के शमन के लिए ग्रन्थकार ने लिखा – समासत्वात् प्रातिपदिकेन सुपो लुक्। इसका अर्थ यह है कि समास संज्ञा होने पर समास की "कृत्तद्धितसमासाश्च" इस सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा होने पर "सुपो धातुप्रातिपदिकयोः" सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् होता है। यह पाठ के अन्त में रूप साधन प्रकिया में और अधिक स्पष्ट हो जाएगा। जैसा कि पाठ के आरम्भ में हमने बताया था कि समास एक वृत्ति है तो अब ग्रन्थोक्त क्रम से वृत्ति का स्वरूप बताया जाएगा साथ ही विग्रह वाक्य क्या होता है ? कितने प्रकार का होता है ? इत्यादि भी स्पष्ट किया जाएगा क्योंकि रूपसाधन प्रक्रिया हेतु इनका ज्ञान होना नितान्त आवश्यक है।

वृत्ति का स्वरूप – परार्थाभिधानं वृत्तिः। परार्थ = दूसरे अर्थ का, अभिधान = कहना (बोध कराना), ही वृत्ति है अर्थात् परार्थ के बोधन कराने को 'वृत्ति' कहा जाता है। प्रत्यय अथवा अन्य पद को साथ लेकर जो विशिष्ट अर्थ प्रतीत हुआ करता है, उसे 'परार्थ' कहते है। वृत्ति से इसी 'परार्थ' का बोध हुआ करता है।

वृत्ति के भेद – कृत्तद्धितसमासैकशेषसनाद्यन्तधातुरूपाः पञ्चवृत्तयः। अर्थात् कृत्, तद्धित, समास, एकशेष तथा सनाद्यन्तधातुरूप ये पाँच वृत्तियाँ होती हैं। 'कृत्' से तात्पर्य कृत् प्रत्यय है जिनका विवेचन 'कृदन्त' प्रकरण में किया गया हैं। तद्धित से तात्पर्य तद्धित प्रत्यय है जिनका विवेचन तद्धित प्रकरणों में किया गया है। 'समास' तथा 'एकशेष' वर्तमान प्रसङ्ग में आपके पाठ्यांशमें यहाँ बतलाये ही जा रहे हैं तथा सनाद्यन्त धातुरूप वृत्ति से तात्पर्य ण्यन्त, सन्नन्त, नामधातु आदि प्रक्रियाओं से है जिनका विवेचन उन उन सम्बन्धित प्रकरणों में किया गया है। इस वृत्ति के कार्य हैं – सन, क्यच्, काम्यच् आदि प्रत्यय।

विग्रहवाक्य की परिभाषा व भेद – वृत्त्यर्थावबोधकं वाक्यं विग्रहः। वृत्ति के अर्थ का ज्ञान कराने वाले वाक्य को 'विग्रह' कहा जाता है। जैसे राजपुरुषः यह समासवृत्ति है।

इसके अर्थ की प्रतीति 'राज्ञः पुरुषः' इस वाक्य द्वारा होती है। अतः इसी का नाम विग्रह है। स च लौकिकोऽलौकिकश्चेति द्विधा। वह लौकिक और अलौकिक भेद से दो प्रकार का है। (1) लौकिक विग्रह – जिसका लोक में प्रयोग किया जाता है उसे लौकिक कहा जाता है। जैसे – राजपुरुषः का राज्ञः पुरुषः यह लौकिक विग्रह है। (2) अलौकिक विग्रह – जिसका लोक में प्रयोग नहीं होता उसे अलौकिक विग्रह कहा जाता है। जैसे – राजपुरुष का 'राजन्. ङस्, पुरुष. सु' यह अलौकिक विग्रह है।

उदाहरण – भूतपूर्वः– "पूर्वं भूतः" इस लौकिक एवं "पूर्व अम् भूत सु" इस अलौकिक विग्रह में "सुप् सुपा" सूत्र से सुबन्त 'पूर्व' का 'भूतः' इस सुबन्त के साथ समास हो जाने पर "कृत्तद्धितसमासाश्च" सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा हो जाने पर "सुपो धातुप्रातिपदिकयोः" सूत्र से सुप् विभक्ति 'अम्' और 'सु' का लोप होकर 'पूर्व भूत' रूप बन जाने पर "भूतपूर्वं चरट्" इस सूत्र के निर्देश से 'भूत'शब्द के पूर्व निपात हो जाने पर 'भूतपूर्व' प्रातिपदिक से प्रथमा एकवचन में सु प्रत्यय करने पर भूतपूर्वः रूप बनता है।

वार्तिक –इवेन समासो विभक्त्यलोपश्च । (वार्तिक)

वृत्ति – सुप् इवेन सह समस्यते समासावयव–विभक्तेरलोपश्च भवति।

अनुवाद – सुबन्त का इव अव्यय के साथ समास होता है, परन्तु समासावयव विभक्ति का लोप नहीं होता।

व्याख्या – इवेन, समासः, विभक्त्यलोपः, च यह पदच्छेद है। इस प्रकार चतुष्पदात्मक वार्तिक है। इस वार्तिक में भी "सुबामन्त्रिते पराङ्गवत्स्वरे" सूत्र से 'सुप्' की पूर्ववत् अनुवृत्ति होती है। तो इसका अर्थ होता है – इव इस अव्यय पद के साथ 'सुबन्त' का समास होता है और विभक्ति का लोप नहीं होता है।

उदाहरण – वागर्थाविव – वागर्थौ इव इस लौकिक विग्रह एवं वागर्थ औ+इव इस अलौकिक विग्रह में प्रकृत वार्तिक से 'इव' के साथ वागर्थौ इस सुबन्त का समास होने पर "कृत्तद्धितसमासाश्च" से समास की प्रातिपदिक संज्ञा होने पर "सुपो धातुप्रातिपदिकयोः" से विभक्ति का लोप प्राप्त होता है उसका इसी वार्तिकांश 'विभक्त्यलोपश्च' से निषेध करने पर वागर्थौ+इव स्थिति में औ के स्थान पर 'आव्' आदेश होकर 'वागर्थ् आव् इव' = 'वागर्थाविव' सिद्ध होता है।

इस प्रकार केवलसमास प्रकरण के समाप्त होने पर अव्ययीभाव प्रकरण का आरम्भ अग्रिम सूत्र से होता है।

सूत्र – अव्ययीभावः 2.1.5

सूत्रवृत्ति – अधिकारोऽयं प्राक् तत्पुरुषात्।

सूत्रानुवाद – यह अधिकार (सूत्र) है, इसका अधिकार यहाँ से "तत्पुरुषः" सूत्र से पूर्व तक होगा।

व्याख्या – अव्ययीभावः यह एकपदात्मक सूत्र है। यह अधिकार सूत्र है अतः "तत्पुरुषः" सूत्र से पूर्व सूत्र तक जो भी समास विधान किया जाएगा वहाँ इसका अधिकार रहेगा और उसकी समास के साथ साथ अव्ययीभावसंज्ञा भी होगी।

सूत्र – अव्ययं विभक्ति–समीप–समृद्धि–व्यृद्ध्यर्थाभावात्ययासम्प्रति–शब्दप्रादुर्भाव–पश्चाद्–यथाऽऽनुपूर्व्य–यौगपद्य–सादृश्य–सम्पत्ति–साकल्याऽन्तवचनेषु। 2.1.6

सूत्रवृत्ति – विभक्त्यर्थादिषु वर्तमानमव्ययं सुबन्तेन सह नित्यं समस्यते। प्रायेणाऽविग्रहो नित्यसमासः, प्रायेणाऽस्वपदविग्रहो वा।

सूत्रानुवाद – विभक्त्यर्थादि में विद्यमान अव्यय का सुबन्त के साथ नित्य समास होता है। प्रायः नित्य समास का अविग्रह (जिसका लौकिक विग्रह न कहा जा सके) अथवा अस्वपदविग्रह (जिसका समस्यमान पदों से भिन्न पदों से लौकिक विग्रह दर्शाया जाए) होता है।

व्याख्या – अव्ययम्, विभक्तिसमीप.....वचनेषु, यह पदच्छेद है। यह द्विपदात्मक विधि सूत्र है। यहाँ "सुबान्मन्त्रिते पराङ्गवत्स्वरे" से सुप् तथा "समर्थः पदविधिः" समर्थ पद की अनुवृत्ति होती है जिसका तृतीयान्ततया विभक्ति विपरिणाम करके "समर्थेन" कर दिया जाता है। तो इस प्रकार सूत्रार्थ होता है – 1. विभक्ति, 2. समीप, 3. समद्धि (ऋद्धि का आधिक्य), 4. व्यृद्धि (ऋद्धि का अभाव), 5. अर्थाभाव (वस्तु का अभाव), 6. अत्यय (नष्ट होना, अतीत होना, गुजर जाना), 7. असम्प्रति (अब युक्त (उचित) न होना), 8. शब्दप्रादुर्भाव (शब्द की प्रकाशता वा प्रसिद्धि), 9. पश्चात् (पीछे), 10. यथा (योग्यता, वीप्सा, पदार्थानतिवृत्ति और सादृश्य), 11. आनुपूर्व्य (क्रमानुसार, क्रमशः), 12. यौगपद्य (एक साथ होना), 13. सादृश्य (सदृश), 14. सम्पत्ति (अनुरूप आत्मभाव), 15. साकल्य (सम्पूर्णता), और 16. अन्त (समाप्ति) इन सोलह अर्थों में से किसी भी अर्थ में वर्तमान जो अव्यय है उसका समर्थ सुबन्त के साथ नित्य समास होता है और वह समास अव्ययीभावसंज्ञक होता है। इस समास में विकल्प नहीं कहा गया अतः यह नित्यसमास है।

विभक्त्यर्थ का उदाहरण – अधिहरि – हरौ इति इस अस्वपदविग्रह में हरि ङि+अधि इस अलौकिकविग्रह में अधिकरणरूप विभक्त्यर्थ में विद्यमान अव्यय अधि का हरि ङि इस सुबन्त के साथ "अव्ययं विभक्ति...." इत्यादि सूत्र से समास करने पर प्रश्न होता है कि हरि ङि+अधि इस अवस्था में किस पद को पूर्व रखा जाए तो इसके लिए अग्रिम सूत्र प्रस्तुत है –

सूत्र – प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम् । 1.2.43

वृत्ति – समासशास्त्रे प्रथमानिर्दिष्टमुपसर्जनसंज्ञं स्यात्।

अनुवाद – समासशास्त्रे = समास विधायक सूत्रों में प्रथमानिर्दिष्टम् = प्रथमाविभक्ति से जिस पद का निर्देश किया जाता है उसकी उपसर्जन संज्ञा होती हैं।

व्याख्या – प्रथमानिर्दिष्टम्, समासे, उपसर्जनम् यह पदच्छेद है। यह त्रिपदात्मक सूत्र है। समासे पद से समासशास्त्र अर्थात् समास विधायक सूत्र का ग्रहण किया जाता है।

यदि समासे पद को यथाश्रुत मान लिया जाए तो समास में जो प्रथमाविभक्त्यन्त है उसकी उपसर्जन संज्ञा हो जाएगी। जैसे कृष्णं श्रितः इस विग्रह में श्रित पद प्रथमान्त श्रूयमाण है, तो इसकी उपसर्जनसंज्ञा होने पर पूर्वनिपात होने लग जाएगा और कृष्णश्रित यह अभीष्टरूप सिद्ध नहीं होगा। अतः समासे पद से समासविधायक सूत्र ग्रहण करने पर कृष्णं श्रित इस विग्रह में समास के विधायक सूत्र में "द्वितीया श्रितातीतपतितगत्यस्तप्राप्तापन्नैः" द्वितीया पद प्रथमा विभक्ति से निर्दिष्ट है। श्रितादि तो तृतीयान्त है। अतः समास विधायक सूत्र में प्रथमानिर्दिष्ट की ही उपसर्जनसंज्ञा होती है। प्रस्तुत उदाहरण में समास विधान करने वाले सूत्र 'अव्ययं विभक्ति' में 'अव्ययम्' पद प्रथमान्त है। अतः प्रकृत सूत्र से यह 'उपसर्जन' संज्ञक होगा। 'हरि ङिः अधि' में 'अधि' यह अव्यय है। अतः यह उपसर्जन हुआ। तो इस प्रकार अधि की उपसर्जन संज्ञा हो जाने पर उसके प्रयोजनीभूत कार्य को बताने हेतु अग्रिमसूत्र –

सूत्र –उपसर्जनं पूर्वम् । 2.2.30

वृत्ति – समासे उपसर्जनं प्राक् प्रयोज्यम्। इत्यधेः प्राक् प्रयोगः। (सुपो लुक, एकदेशविकृतस्यानन्यत्वात्प्रातिपदिकसंज्ञायां स्वाद्युत्पत्तिः, 'अव्ययीभावश्च' इत्यव्ययत्वात् सुपो लुक–अधिहरि।)

अनुवाद – समास में जिसकी उपसर्जन संज्ञा की है उसका पूर्वप्रयोग होता है। जैसे– हरि ङि अधि में अधि उपसर्जन संज्ञक है। अतः प्रकृत सूत्र से उसका प्रयोग पहले होगा। तब स्थिति होगी– अधि हरि ङि

व्याख्या – उपसर्जनम् पूर्वम् यह द्विपदात्मक सूत्र है। उपसर्जनम् पूर्वम् इति द्वितीयैकवचनान्तं क्रियाविशेषणम्। समासे सप्तमी एकवचनान्त का प्राक्कडारात्समासः से अधिकृत 'समासः' पद को सप्तम्यन्ततया विपरिणत कर लिया जाता है। 'प्रयोज्यम्' का अध्याहार करते हैं। तो इस प्रकार समुदित सूत्रार्थ फलित होता है – समासे = समास में उपसर्जनसंज्ञक को पूर्व अथाव पहले प्रयुक्त करना चाहिये। समास में किसी को पहले प्रयुक्त करना पूर्वनिपात तथा बाद में प्रयुक्त करना परनिपात कहा जाता है। प्रस्तुत सूत्र उपसर्जनसंज्ञक के पूर्वनिपात का प्रतिपादन करता है।

तो इस प्रकार अधि शब्द का पूर्वनिपात करने पर अधि हरि ङि इस अवस्था में "कृत्तद्धितसमासाश्च" से सम्पूर्ण समास–समुदाय की प्रातिपदिकसंज्ञा तथा "सुपो धातुप्रातिपदिकयोः" द्वारा प्रातिपदिक के अवयव सुप् (ङि विभक्ति) का लुक करने से अधिहरि बन जाता है। इसके बाद एकदेशविकृतमनन्यवत् न्यायानुसार इस की पुनः प्रातिपदिकसंज्ञा करके पुनः सुबुत्पत्ति करके प्रथमा एकवचन की विवक्षा में सु प्रत्यय करके उसका "अव्ययीभावश्च" इस सूत्र से अव्ययसंज्ञा करने पर "अव्ययादाप्सुपः" से सुब्लुक् करने पर अधिहरि रूप सिद्ध हो जाता है।

सूत्र – अव्ययीभावश्च । 2.4.18

वृत्ति – अयं नपुंसकं स्यात्। गाः पातीति गोपाः तस्मिन् अधिगोपम्।

अनुवाद – अव्ययीभावसमास नपुंसक हो।

व्याख्या – अव्ययीभावः, च यह पदच्छेद है। "स नपुंसकम्" सूत्र से 'नपुंसक' पद की अनुवृत्ति कर ली जाती है। 'च' शब्द जो कि अव्यय है, समुच्चयार्थ प्रयुक्त किया गया है। तो इस प्रकार सूत्रार्थ होगा कि अव्ययीभावसमास भी नपुंसकलिङ्ग में प्रयुक्त होगा।

सूत्र –नाव्ययीभावादतोऽम् त्वपञ्चम्याः । 2.4.83

वृत्ति – अदन्तात् अव्ययीभावात् सुपो न लुक्, तस्य पञ्चमीं विना 'अम्' आदेशः स्यात्। गाः पातीति गोपास्तस्मिन् अधिगोपम्।

अनुवाद – अदन्त अव्ययीभावसमास से परे सुप् का लुक् न हो, परन्तु पञ्चमी को छोड़कर अन्य सुप् प्रत्ययों के स्थान पर अम् आदेश हो।

व्याख्या – न, अव्ययीभावात्, अतः, अम्, तु, अपञ्चम्याः यह पदच्छेद है। न एक अव्ययपद है। 'अव्ययीभावात्' तथा 'अतः' पञ्चमी विभक्त्यन्त एकवचनान्त हैं। 'अतः' पद अव्ययीभावात् का विशेषण है जिससे तदन्तविधि होकर अदन्तात् अव्ययीभावात् ऐसा अर्थ होता है। इस सूत्र में "ण्यक्षत्रियार्षञितो यूनि लुक्" सूत्र से लुक् की तथा "अव्ययादाप्सुपः" सूत्र से स्थानषष्ठ्यन्त 'सुपः' पद की अनुवृत्ति होती है जिसका अर्थ है सुपों के स्थान पर। अपञ्चम्याः का अर्थ पञ्चमी को छोड़कर है, तो इस प्रकार सम्पूर्ण सूत्रार्थ यह फलित होता है कि – अदन्त अव्ययीभावसमास से परे सुप् का लुक् न हो, परन्तु पञ्चमी को छोड़कर अन्य सुप् प्रत्ययों के स्थान पर अम् आदेश हो। इस सूत्र में जो 'तु' अव्ययपद है इसके ग्रहण से विलक्षण अर्थ यह होता है कि पञ्चमी का न तो लुक् होता है न ही अमादेश। यदि सूत्र में तु का ग्रहण नहीं किया जाता तो सूत्र का अर्थ होता कि पञ्चमी को छोड़कर अन्य सुपों का लुक् हो तथा उनके स्थान पर अमादेश हो, इस प्रकार पञ्चमी को अम् आदेश तो नहीं होता लेकिन "अव्ययादाप्सुपः" सुपः से पञ्चमी का लुक् हो जाता जो कि अनिष्ट है।

उदाहरण – अधिगोपम् – गाः पाति इति गोपाः (गोपा के रूप विश्वपा की तरह) तस्मिन् गोपि इति इस अस्वपदविग्रह में गोपा ङि अधि इस अलौकिक विग्रह में अधिकरणरूप विभक्त्यर्थ में विद्यमान अव्यय अधि का गोपा ङि इस सुबन्त के साथ "अव्ययं विभक्ति...." इत्यादि सूत्र से समास करने पर "कृत्तद्धितसमासाश्च" इस सूत्र से समाससंज्ञा करने पर "सुपो धातुप्रातिपदिकयोः" सूत्र से सुब्लुक् करने पर गोपा अधि इस अवस्था में "प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम्" इस सूत्र से उपसर्जन संज्ञा तथा "उपसर्जनं पूर्वम्" सूत्र से 'अधि' का पूर्वनिपात करके अधि गोपा इस अवस्था में समास समुदाय की "अव्ययीभावश्च" सूत्र से नपुंसकलिङ्ग हो जाने पर "ह्रस्वो नपुंसके प्रातिपदिकस्य" सूत्र से ह्रस्व होने पर अधिगोप इस अवस्था में समुदाय की पुनः प्रातिपदिकसंज्ञा करके प्रथमा एकवचन विवक्षा में सु–प्रत्यय करने पर अधिगोप सु इस अवस्था में "अव्ययादाप्सुपः" सूत्र से सुप् का लुक् प्राप्त होने पर "नाव्ययीभावादतोऽम् त्वपञ्चम्याः" इस सूत्र से सु को अम् आदेश करने पर अधिगोप अम् इस दशा में "अमिपूर्वः" से पूर्वरूप करने पर अधिगोपम् रूप सिद्ध होता है।

सूत्र – तृतीयासप्तम्योर्बहुलम् । 2.4.84

वृत्ति – अदन्तात् अव्ययीभावात् तृतीया–सप्तम्योर्बहुलम् 'अम्' भावः स्यात्। कृष्णस्य समीपम् उपकृष्णम्। उपकृष्णेन। उपकृष्णे।

("अव्ययं विभक्ति..." सूत्र के अन्य उदाहरण – मद्राणां समृद्धिः – सुमद्रम्। यवनानां व्यृद्धिः – दुर्यवनम्। मक्षिकाणामभावः – निर्मक्षिकम्। हिमस्यात्ययः – अतिहिमम्। निद्रा सम्प्रति न युज्यते इति – अतिनिद्रम्। हरिशब्दस्य प्रकाशः – इतिहरि। विष्णोः पश्चाद् – अनुविष्णु। योग्यता–वीप्सा–पदार्थाऽनतिवृत्ति–सादृश्यानि यथार्थाः। रूपस्य योग्यम् – अनुरूपम्, अर्थमर्थं प्रति – प्रत्यर्थम्। शक्तिमनतिक्रम्य – यथाशक्ति।)

अनुवाद – अदन्त अव्ययीभावसमास से परे तृतीया और सप्तमी के स्थान पर बहुल रूप से अम् आदेश हो।

व्याख्या – इस सूत्र में तृतीयासप्तम्योः, बहुलम् यह दो पद हैं। अव्ययीभावात्, अतः, अम्, यह तीन पद पूर्व सूत्र से अनुवृत्त हैं। पूर्ववत् अतः अव्ययीभावात् का विशेषण है, तृतीयासप्तम्योः में इतरेतरयोगद्वन्द्व समास और स्थानषष्ठी द्विवचनान्त है। तृतीया और सप्तमी के स्थान पर ऐसा अर्थ लब्ध होता है। अम् आदेशात्मक पद है। तो इस प्रकार सूत्र का अर्थ हुआ कि अदन्त अव्ययीभाव समास से परे तृतीया और सप्तमी विभक्ति के स्थान पर अम् भाव बहुलप्रकार से होता है। बहुल का अर्थ शब्दावली में अधिक स्पष्ट करेंगें। इस सूत्र में तो एक प्रकार से विकल्प अर्थ है। इस सूत्र के द्वारा होने वाला अम् भाव विकल्प से मलतब तृतीया और सप्तमी में दो दो रूप बनेंगें, एक अम् भाव से युक्त दूसरा तृतीया तथा सप्तम्यन्त। यह कह सकते है कि पूर्व सूत्र से जहाँ नित्य अम्भाव प्राप्त था उसको बाधकर इस सूत्र से विकल्प से अम् भाव होता है।

उदाहरण (यह अव्ययं विभक्तिसमीप... इत्यादि सूत्र का समीपार्थक अव्यय के समास का उदाहरण है) –**उपकृष्णम्** –**उपकृष्णेन** – कृष्णस्य समीपम् इस अस्वपदविग्रह में कृष्ण ङस् उप इस अलौकिक विग्रह में समीपार्थक अव्यय उप का कृष्ण ङस् इस सुबन्त के साथ "अव्ययं विभक्ति...." इत्यादि सूत्र से समास करने पर "कृत्तद्धितसमासाश्च" इस सूत्र से समाससंज्ञा करने पर "सुपो धातुप्रातिपदिकयोः" सूत्र से सुब्लुक् करने पर कृष्ण उप इस अवस्था में "प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम्" इस सूत्र से उपसर्जन संज्ञा तथा "उपसर्जनं पूर्वम्" सूत्र से 'उप' का पूर्वनिपात करके उपकृष्ण इस अवस्था में समुदाय की पुनः प्रातिपदिकसंज्ञा करके तृतीया एकवचन विवक्षा में टा–प्रत्यय करने पर उपकृष्ण टा इस अवस्था में "नाव्ययीभावादतोऽत्वपञ्चम्याः" इस सूत्र से टा को नित्य अम् आदेश प्राप्त होने पर "तृतीयासप्तम्योर्बहुलम्" सूत्र से बहुलम् अम्भाव करने पर उपकृष्ण अम् इस दशा में "अमिपूर्वः" से पूर्वरूप करने पर उपकृष्णम् तथा अम्भाव के अभाव में टा के स्थान पर इन आदेश आदि विभक्तिकार्य करके उपकृष्णेन रूप सिद्ध होते हैं। इसी प्रकार से सप्तमी में भी अम्भावयुक्त एक रूप तथा उसके अभाव में सप्तमीघटित होकर उपकृष्णे यह रूप बनेंगें।

ध्यातव्य – नित्य अम्भाव, बहुलम् अम्भाव के पञ्चमी को छोड़कर प्रवृत्त होने के कारण तृतीया विभक्ति के प्रत्येक वचन में दो रूप (उपकृष्णम्–उपकृष्णात्, उपकृष्णम्–उपकृषणाभ्याम्, उपकृष्णम्–उपकृष्णैः), सप्तमी के प्रत्येक वचन में दो रूप (उपकृष्णम्–उपकृष्णे, उपकृष्णम्–उपकृषणयोः, उपकृष्णम्–उपकृष्णेषु) तथा पञ्चमी में तो विभक्ति विशिष्टरूप उपकृष्णात्, उपकृषणाभ्याम्, उपकृष्णेभ्यः रूप बनेंगें।

सूत्र – अव्ययीभावे चाऽकाले । 6.3.81

वृत्ति – सहस्य सः स्यादव्ययीभावे न तु काले। हरेः सादृश्यं सहरि। ज्येष्ठस्यानुपूर्व्येण इति अनुज्येष्ठम्। चक्रेण युगपत् सचक्रम्। सदृशः सख्या ससखि। क्षत्राणां सम्पत्तिः सक्षत्रम्। तृणमप्यपरित्यज्य सतृणम् अत्ति। अग्निग्रन्थपर्यन्तमधीते साग्नि।

अनुवाद – अव्ययीभावसमास में 'सह' के स्थान पर 'स' आदेश हो। परन्तु कालविशेषवाचक शब्द यदि उत्तरपद में हो तो यह आदेश न हो।

व्याख्या – अव्ययीभावे, च, अकाले यह त्रिपदात्मक सूत्र है। इस सूत्र में "सहस्य स संज्ञायाम्" सूत्र से सहस्य पद की अनुवृत्ति होती है। और "अलुगुत्तरपदे" सूत्र से उत्तरपदे का अधिकार है। अकाले में नञ् तत्पुरुषसमास है – न काले अकाले = कालवाचकभिन्न पदे ऐसा अर्थ होता है। यहाँ काल शब्द से काल शब्द का ग्रहण अभिप्रेत नहीं है, अपितु काल विशेषवाची (पूर्वाह्न, अपराह्न इत्यादि) शब्दों का अभिप्रैत है। तो इस प्रकार सम्पूर्ण सूत्रार्थ – अव्ययीभावसमास में 'सह'शब्द के स्थान पर 'स' आदेश होता है परन्तु अकाले = कालविशेषवाची उत्तरपद के परे रहते नहीं। यहाँ 'स' आदेश अनेकाल् (स अ) है अतः "अनेकाल्शित्सर्वस्य" सूत्र के कारण सम्पूर्ण सह के स्थान पर होता है।

उदाहरण –सहरि – हरेः सादृश्यम् इस अस्वपदविग्रह विग्रह में हरि ङस् सह इस अलौकिक विग्रह में "अव्ययं विभक्तिसमीप...." इत्यादि सूत्र से सादृश्यार्थक अव्यय सह का हरेः इस सुबन्त के साथ अव्ययीभावसमास–प्रातिपदिकसंज्ञा–सुब्लुक्–पूर्वनिपातादि प्रक्रिया पूर्ण करने के बाद सहहरि इस अवस्था में "अव्ययीभावे चाऽकाले" इस सूत्र से सह के स्थान पर स–आदेश करने पर सहरि बनने के बाद पुनः प्रातिपदिकसंज्ञा विभक्त्यादिकार्य करके सहरि रूप निष्पन्न होता है।

सूत्र – नदीभिश्च । 2.1.20

वृत्ति – नदीभिः सह संख्या समस्यते। वार्तिकम् –समाहारे चायमिष्यते। पञ्चगङ्गम्, द्वियमुनम्।

अनुवाद – संख्यावाची सुबन्त नदीवाचक सुबन्तों के साथ अव्ययीभावसमास को प्राप्त करता है। वार्तिकार्थ – यह समाहार अर्थ में ही इष्ट है।

व्याख्या – नदीभिः च यह पदच्छेद है। इस सूत्र में "संख्या वंश्येन" सूत्र से 'संख्या' पद की तथा "सह सुपा" सूत्र से 'सह' पद की अनुवृत्ति होती है। "प्राक्कडारात् समासः" "अव्ययीभावः" इनका अधिकार पूर्ववत् है ही। यहाँ नदीभिः में बहुवचन ग्रहण करने से नदीसंज्ञक (गौरी इत्यादि) शब्दों का तथा नदी शब्द का ग्रहण अभिप्रेत नहीं है, अपितु नद्यर्थकों का ग्रहण होता है। नद्यर्थकों से नदीविशेष वाचकों गङ्गा, यमुना इत्यादि तथा स्वयं नदी शब्द का ग्रहण हो जाता है। तो इस प्रकार सूत्रार्थ फलित होता है कि – संख्यावाची सुबन्त का नद्यर्थक सुबन्तों के साथ जो अव्ययीभाव समास होता है वह पूर्वोक्त वार्तिक (समाहारे चायमिष्यते) के नियम से समाहारार्थ में होता है।

यहाँ ध्यातव्य है कि समाहार अर्थ में "तद्धितार्थोत्तरपदसमाहारे च" "संख्यापूर्वो द्विगुः" इन सूत्रों से विहित द्विगु समास का यह अपवाद है।

उदाहरण – पञ्चगङ्गम् – पञ्चानां गङ्गानां समाहारः इस लौकिक विग्रह में पञ्चन् आम् गङ्गा आम् इस अलौकिक विग्रह में "नदीभिश्च" इस सूत्र से अव्ययीभावसमास करने पर समाससंज्ञा के पश्चात् "कृत्तद्धितसमासाश्च" से प्रातिपदिकसंज्ञा तथा "सुपो धातुप्रातिपदकयोः" सूत्र से सुब्लुक् करने पर पञ्चन् गङ्गा इस अवस्था में यहाँ समासविधायकसूत्र "नदीभिश्च" सूत्र में अनुवर्तित संख्या पद प्रथमान्त होने के कारण "प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम्" इस सूत्र से संख्यावाचक पञ्चन् शब्द की उपसर्जनसंज्ञा होने पर "उपसर्जनं पूर्वम्" सूत्र से पूर्वनिपात होने पर पञ्चन् गङ्गा इस अवस्था में "न लोपः प्रातिपदिकान्तस्य" सूत्र से पञ्चन् के नकार का लोप करने पर पञ्च गङ्गा इस अवस्था में "अव्ययीभावश्च" सूत्र से अव्ययीभावसमास को नपुंसक विधान करके "ह्रस्वो नपुंसके प्रातिपदकस्य" सूत्र से ह्रस्व करके पञ्च गङ्ग इस अवस्था में पुनः प्रातिपदिकसंज्ञा करके प्रथमा एकवचन विवक्षा में सु–प्रत्यय करके "नाव्ययीभावादतोऽमत्वपञ्चम्याः" सूत्र से सु को अम्–भाव करके पूर्वरूपादिकार्य के पश्चात् पञ्चगङ्गम् सिद्ध होता है।

सूत्र – तद्धिताः । 4.1.76

वृत्ति – आपञ्चमसमाप्तेरधिकारोऽयम्।

अनुवाद – इस सूत्र से लेकर अष्टाध्ययी के पञ्चमाध्याय समाप्तिपर्यन्त इसका अधिकार है।

व्याख्या – यह एकापदात्मक सूत्र अधिकार सूत्र है। इस सूत्र के उपदेश (जहाँ यह पढ़ा गया है) से लेकर अष्टाध्यायी के पञ्चमाध्याय की समाप्तिपर्यन्त इस सूत्र का अधिकार क्षेत्र है। अर्थात् चतुर्थाध्याय में पहले पाद के 77वें सूत्र से ही इसका अधिकार शुरु हो जाता है। इसका प्रयोजन समासान्त प्रत्ययों की भी तद्धितसंज्ञा करना है। जिससे कि "नस्तद्धिते" से टिलोप, "यस्येति च" से भसंज्ञक इवर्ण–अवर्ण का तद्धित प्रत्यय परे लोपादिकार्य समास में भी किए जा सके।

सूत्र –अव्ययीभावे शरत्प्रभृतिभ्यः । 5.4.107

वृत्ति – शरदादिभ्यष्टच् स्यात् समासान्तोऽव्ययीभावे। शरदः समीपम् उपशरदम्। प्रतिविपाशम्। गणसूत्रम् "जराया जरस्"। उपजरसमित्यादि।

अनुवाद – अव्ययीभावसमास में शरद् आदि प्रातिपदिकों से परे तद्धितसंज्ञक टच् प्रत्यय हो तथा वह समासान्त (समास का अन्तावयव हो)। यहाँ "जरायाः जरस्" इस गणसूत्र से जरा शब्द के स्थान पर जरस् आदेश हो।

व्याख्या – यह एकापदात्मक सूत्र अधिकार सूत्र है। इस सूत्र में "राजाहस्सखिभ्यष्टच्" से टच् की अनुवृत्ति होती है, तद्धिताः, समासान्ताः, प्रत्ययः, परश्च तथा ङ्याप्प्रातिपदिकात् इन सभी सूत्रों का अधिकार भी है। शरत्प्रभृति शब्द से शरद् शब्द से लेकर शरदादिगण में पठित सभी शब्दों का ग्रहण है। शरत्प्रभृतिभ्यः में पञ्चमी होने से शरद् इत्यादि प्रातिपदिक के पर में ऐसा अर्थ लब्ध होता है। तो सम्पूर्ण सूत्रार्थ इस प्रकार होगा कि अव्ययीभाव समास में शरद् आदि प्रातिपदिकों के पर में समासान्त टच् प्रत्यय होगा जो कि समास समुदाय का अन्तावयव होगा। 'टच्' में टकार व चकार की इत्संज्ञा हो जाने से 'अ' ही शेष रहता है। इस प्रकार शरद् इत्यादि से युक्त हलन्त

समाससमुदाय भी अदन्त हो जाएगा। फलस्वरूप नाव्ययीभावादतोऽम्त्वपञ्चम्याः तथा तृतीयासप्तम्योर्बहुलम् सूत्रों की प्रवृत्ति भी होगी।

उदाहरण – उपशरदम् – शरदः समीपम् इस अस्वपदविग्रह में शरद् ङस् उप इस अलौकिक विग्रह में "अव्ययं विभक्तिसमीप....." इत्यादि सूत्र से अव्ययीभावसमास करने पर समाससंज्ञा के पश्चात् "कृत्तद्धितसमासाश्च" से प्रातिपदिकसंज्ञा तथा "सुपो धातुप्रातिपदकयोः" सूत्र से सुब्लुक् करने पर शरद् उप इस अवस्था में "प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम्" इस सूत्र से समासविधायक सूत्र में अव्ययपद के प्रथमानिर्दिष्ट होने से उपसर्जनसंज्ञा होने पर "उपसर्जनं पूर्वम्" सूत्र से पूर्वनिपात होने पर उपशरद् इस अवस्था में "अव्ययीभावे शरत्प्रभृतिभ्यः" सूत्र से समासान्त टच् प्रत्यय अनुबन्ध लोप होने पर उप शरद् अ इस अवस्था में सभी को मिलाकर समुदाय के अदन्त हो जाने पर उपशरद शब्द की पुनः प्रातिपदिकसंज्ञा करके प्रथमा एकवचन विवक्षा में सु–प्रत्यय करके "नाव्ययीभावादतोऽमत्वपञ्चम्याः" सूत्र से सु को अम्–भाव करके पूर्वरूपादिकार्य के पश्चात् उपशरदम् सिद्ध होता है।

सूत्र – अनश्च । 5.4.108

वृत्ति – अन्नन्ताद् अव्ययीभावात् टच् स्यात्।

अनुवाद –अन्नन्त (अन् जिसके अन्त में हो) अव्ययीभावसमास से परे तद्धितसंज्ञक टच् प्रत्यय हो तथा वह समासान्त (समास का अन्तावयव हो)।

व्याख्या – अनः, च यह पदच्छेद है। इस सूत्र में भी "राजाहस्सखिभ्यष्टच्" से टच् की अनुवृत्ति होती है, तथा पूर्वसूत्र से अव्ययीभावे शरत्प्रभृतिभ्यः से अव्ययीभावे की अनुवृत्ति होती है जिसका पञ्चम्यन्त में विभक्तिविपरिणाम हो जाता है। तद्धिताः, समासान्ताः, प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात् इन सभी सूत्रों का अधिकार भी है। अनः यह पञ्चमी एकवचनान्त है तथा अव्ययीभाव का विशेषण है जिससे तदन्तविधि होकर सम्पूर्ण सूत्रार्थ अनन्त अव्ययीभाव से पर में टच् समासान्त हो ऐसा अर्थ लब्ध होता है।

सूत्र – नस्तद्धिते । 6.4.144

वृत्ति –नान्तस्य भस्य टेर्लोपः स्यात् तद्धिते। उपराजम्। अध्यात्मम्।

अनुवाद – नकारान्त भसंज्ञक की टि का लोप होता है तद्धित पर में रहने पर।

व्याख्या – नः, तद्धिते यह पदच्छेद है। इस सूत्र में "भस्य" का अधिकार है। टेः सूत्र से 'टे' की, अल्लोपोऽनः सूत्र से 'लोपः' की अनुवृत्ति दोती है। नः पद षष्ठ्यन्त है जिसका अर्थ है नकार का। भस्य का विशेषण होकर तदन्तविधि होने से नकारान्त भसंज्ञक का तद्धित परे लोप होता है यह अर्थ फलित होता है।

उदाहरण – उपराजम् – राज्ञः समीपम् इस अस्वपदविग्रह में राजन् ङस् उप इस अलौकिक विग्रह में "अव्ययं विभक्तिसमीप....." इत्यादि सूत्र से अव्ययीभावसमास करने पर समाससंज्ञा के पश्चात् "कृत्तद्धितसमासाश्च" से प्रातिपदिकसंज्ञा तथा "सुपो धातुप्रातिपदकयोः" सूत्र से सुब्लुक् करने पर राजन् उप इस अवस्था में "प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम्" इस सूत्र से समासविधायक सूत्र में अव्ययपद के प्रथमानिर्दिष्ट होने से उपसर्जनसंज्ञा होने पर "उपसर्जनं पूर्वम्" सूत्र से पूर्वनिपात होने पर उप राजन् इस

अवस्था में "अनश्च" सूत्र से समासान्त टच् प्रत्यय अनुबन्ध लोप होने पर उप राजन् अ इस अवस्था में "नस्तद्धिते" सूत्र से टिभाग = राजन् का अन् का लोप करने पर उप राज् अ इस अवस्था में सभी को मिलाकर समुदाय के अदन्त हो जाने पर उपराज शब्द की पुनः प्रातिपदिकसंज्ञा करके प्रथमा एकवचन विवक्षा में सु–प्रत्यय करके "नाव्ययीभावादतोऽम्त्वपञ्चम्याः" सूत्र से सु को अम्–भाव करके पूर्वरूपादिकार्य के पश्चात् उपराजम् सिद्ध होता है।

सूत्र – नपुंसकादन्यतरस्याम् । 5.4.109

वृत्ति – अन्नन्तं यत् क्लीबं तदन्तादव्ययीभावात् टच् वा स्यात्। उपचर्मम्, उपचर्म।

अनुवाद – अव्ययीभाव के अन्त में अन्नन्त नपुंसक शब्द होने पर अव्ययीभावसमास से परे तद्धितसंज्ञक टच् प्रत्यय विकल्प से हो तथा वह समासान्त (समास का अन्तावयव हो)।

व्याख्या – नपुंसकात्, अन्यतरस्याम् यह पदच्छेद है। अनश्च सूत्र से अनः पञ्चम्यन्त अनुवृत्त होता है एवं "राजाहस्सखिभ्यष्टच्" से टच् की अनुवृत्ति होती है, तथैव पूर्वसूत्र से अव्ययीभावे शरत्प्रभृतिभ्यः से अव्ययीभावे की अनुवृत्ति होती है जिसका पञ्चम्यन्त में विभक्तिविपरिणाम हो जाता है। तद्धिताः, समासान्ताः, प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात् इन सभी सूत्रों का अधिकार भी है। अनः तथा नपुंसकात् यह पञ्चमी एकवचनान्त हैं। तथा अव्ययीभाव के विशेषण हैं जिससे तदन्तविधि होकर सम्पूर्ण सूत्रार्थ अनन्त अव्ययीभाव के अन्त में नुपंसक शब्द होने पर अव्ययीभाव से पर में टच् समासान्त हो और वह अन्यतरस्याम् ग्रहण से विकल्प से होता है – ऐसा अर्थ लब्ध होता है।

उदाहरण – उपचर्मम् –उपचर्म – चर्मणः समीपम् इस अस्वपदविग्रह में चर्मन् ङस् उप इस अलौकिक विग्रह में "अव्ययं विभक्तिसमीप....." इत्यादि सूत्र से अव्ययीभावसमास करने पर समाससंज्ञा के पश्चात् "कृत्तद्धितसमासाश्च" से प्रातिपदिकसंज्ञा तथा "सुपो धातुप्रातिपदकयोः" सूत्र से सुब्लुक् करने पर चर्मन् उप इस अवस्था में "प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम्" इस सूत्र से समासविधायक सूत्र में अव्ययपद के प्रथमानिर्दिष्ट होने से उपसर्जनसंज्ञा होने पर "उपसर्जनं पूर्वम्" सूत्र से पूर्वनिपात होने पर उपचर्मन् इस अवस्था में "अनश्च" सूत्र से समासान्त टच् प्रत्यय प्राप्त होने पर "नपुंसकादन्यतरस्याम्" सूत्र से विकल्प से समासान्त टच् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप होने पर उप चर्मन् अ इस अवस्था में "नस्तद्धिते" सूत्र से टिभाग = चर्मन् का अन् का लोप करने पर उप चर्म अ इस अवस्था में सभी को मिलाकर समुदाय के अदन्त हो जाने पर उपचर्म शब्द की पुनः प्रातिपदिकसंज्ञा करके प्रथमा एकवचन की विवक्षा में सु–प्रत्यय करके "नाव्ययीभावादतोऽम्त्वपञ्चम्याः" सूत्र से सु को अम्–भाव करके पूर्वरूपादिकार्य के पश्चात् उपचर्मम् ऐसा प्रथम रूप तथा समासान्त टच् के अभाव में उपचर्मन् इस अवस्था में प्रातिपदिकसंज्ञा, विभक्तिकार्यादि के पश्चात् "न लोप प्रातिपदिकान्तस्य" सूत्र से नकार लोप करने से उपचर्म यह द्वितीय रूप सिद्ध होता है।

सूत्र –झयः । 5.4.111

वृत्ति –झयन्तादव्ययीभावात् टच् वा स्यात्। उपसमिधम्, उपसमित्।

अनुवाद –झयन्त अव्ययीभाव से विकल्प से समासान्त टच् प्रत्यय हो।

व्याख्या –झयः यह एकपदात्मकसूत्र है। झयः पञ्चमी एकवचनान्त है। इस सूत्र में "राजाहस्सखिभ्यष्टच्" से टच् की अनुवृत्ति होती है, तथैव पूर्वसूत्र नपुंसकादन्यतरस्याम् से अन्यतरस्याम् की तथा अव्ययीभावे शरत्प्रभृतिभ्यः से अव्ययीभावे की अनुवृत्ति होती है जिसका पञ्चम्यन्त में विभक्तिविपरिणाम हो जाता है। तद्धिताः, समासान्ताः, प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात् इन सभी सूत्रों का अधिकार भी है। इस प्रकार सूत्रार्थ होता है –झय प्रत्याहार (वर्गों के प्रथम, द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ वर्ण) जिसके अन्त में हो ऐसे अव्ययीभावसमास से परे तद्धितसंज्ञक टच् प्रत्यय विकल्प से हो तथा वह समासान्त (समास का अन्तावयव हो)।

उदाहरण – उपसमिधम् – उपसमित् – समिधः समीपम् इस अस्वपदविग्रह में समिध् ङस् उप इस अलौकिक विग्रह में "अव्ययं विभक्तिसमीप....." इत्यादि सूत्र से अव्ययीभावसमास करने पर समाससंज्ञा के पश्चात् "कृत्तद्धितसमासाश्च" से प्रातिपदिकसंज्ञा तथा "सुपो धातुप्रातिपदकयोः" सूत्र से सुब्लुक् करने पर समिध् उप इस अवस्था में "प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम्" इस सूत्र से समासविधायक सूत्र में अव्ययपद के प्रथमानिर्दिष्ट होने से उपसर्जनसंज्ञा होने पर "उपसर्जनं पूर्वम्" सूत्र से पूर्वनिपात होने पर उप समिध् इस अवस्था में "झयः" सूत्र से विकल्प से समासान्त टच् प्रत्यय अनुबन्ध लोप होने पर उप समिध् अ इस अवस्था में सभी को मिलाकर समुदाय के अदन्त हो जाने पर उपसमिध शब्द की पुनः प्रातिपदिकसंज्ञा करके प्रथमा एकवचन की विवक्षा में सु–प्रत्यय करके "नाव्ययीभावादतोऽमत्वपञ्चम्याः" सूत्र से सु को अम्–भाव करके पूर्वरूपादिकार्य के पश्चात् उपसमिधम् सिद्ध होता है। वैकल्पिक होने से समासान्त टच् के अभाव में उपसमिध् इस अवस्था में प्रातिपदिकसंज्ञा विभक्तिकार्यादि के उपरान्त धकार को जश्त्व–चर्त्व करने पर उपसमित् यह द्वितीय रूप सिद्ध होता है। यहाँ चर्त्व के भी "वाऽवसाने" सूत्र से वैकल्पिक होने के कारण उपसमिद् यह तृतीय रूप भी सिद्ध होता है। इस प्रकार टच् पक्ष में उपसमिधम् तथा टच् अभाव पक्ष में उपसमित्–उपसमिद् यह रूप बनते हैं।

9.4 कतिपय उदाहरणों की रूपसाधन–प्रक्रिया

सुमद्रम् – मद्राणां समृद्धिः इस अस्वपद लौकिक विग्रह में मद्र आम् सु इस अलौकिक विग्रह में "अव्ययं विभक्तिसमीप....." इत्यादि सूत्र से समृद्धि के अर्थ में अव्ययीभावसमास करने पर समाससंज्ञा के पश्चात् "कृत्तद्धितसमासाश्च" से प्रातिपदिकसंज्ञा तथा "सुपो धातुप्रातिपदकयोः" सूत्र से सुब्लुक् करने पर मद्र सु इस अवस्था में "प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम्" इस सूत्र से समासविधायक सूत्र में अव्ययपद के प्रथमानिर्दिष्ट होने से उपसर्जनसंज्ञा होने पर "उपसर्जनं पूर्वम्" सूत्र से पूर्वनिपात होने पर सुमद्र इस अवस्था में सुमद्र शब्द की पुनः प्रातिपदिकसंज्ञा करके प्रथमा एकवचन विवक्षा में सु–प्रत्यय करके सुमद्र सु इस अवस्था में "नाव्ययीभावादतोऽम्त्वपञ्चम्याः" सूत्र से सु को अम्–भाव करके पूर्वरूपादिकार्य के पश्चात् सुमद्रम् सिद्ध होता है।

दुर्यवनम् – यवनानां व्यृद्धिः इस अस्वपद लौकिक विग्रह में यवन आम् दुर् इस अलौकिक विग्रह में "अव्ययं विभक्तिसमीप....." इत्यादि सूत्र से व्यृद्धि के अर्थ में अव्ययीभावसमास करने पर समाससंज्ञा के पश्चात् "कृत्तद्धितसमासाश्च" से प्रातिपदिकसंज्ञा तथा "सुपो धातुप्रातिपदकयोः" सूत्र से सुब्लुक् करने पर यवन दुर् इस

अवस्था में "प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम्" इस सूत्र से समासविधायक सूत्र में अव्ययपद के प्रथमानिर्दिष्ट होने से उपसर्जनसंज्ञा होने पर "उपसर्जनं पूर्वम्" सूत्र से पूर्वनिपात होने पर दुर् यवन इस अवस्था में दुर्यवन शब्द की पुनः प्रातिपदिकसंज्ञा करके प्रथमा एकवचन की विवक्षा में सु–प्रत्यय करके दुर्यवन सु इस अवस्था में "नाव्ययीभावादतोऽम्त्वपञ्चम्याः" सूत्र से सु को अम्–भाव करके पूर्वरूपादिकार्य के पश्चात् दुर्यवनम् सिद्ध होता है।

निर्मक्षिकम् – मक्षिकाणाम् अभावः इस अस्वपद लौकिक विग्रह में मक्षिका आम् निर् इस अलौकिक विग्रह में "अव्ययं विभक्तिसमीप....." इत्यादि सूत्र से अभाव के अर्थ में अव्ययीभावसमास करने पर समाससंज्ञा के पश्चात् "कृत्तद्धितसमासाश्च" से प्रातिपदिकसंज्ञा तथा "सुपो धातुप्रातिपदकयोः" सूत्र से सुब्लुक् करने पर मक्षिका निर् इस अवस्था में "प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम्" इस सूत्र से समासविधायक सूत्र में अव्ययपद के प्रथमानिर्दिष्ट होने से उपसर्जनसंज्ञा होने पर "उपसर्जनं पूर्वम्" सूत्र से पूर्वनिपात होने पर निर् मक्षिका इस अवस्था में "अव्ययीभावश्च" सूत्र से अव्ययीभाव समास को नपुंसक मानकर "ह्रस्वो नपुंसके प्रातिपदिकस्य" सूत्र से निर्मक्षिका के आकार को ह्रस्व करके निर्मक्षिक शब्द हो जाने पर उसकी पुनः प्रातिपदिकसंज्ञा करके प्रथमा एकवचन विवक्षा में सु–प्रत्यय करके निर्मक्षिक सु इस अवस्था में "नाव्ययीभावादतोऽम्त्वपञ्चम्याः" सूत्र से सु को अम्–भाव करके पूर्वरूपादिकार्य के पश्चात् निर्मक्षिकम् सिद्ध होता है।

अतिनिद्रम् – निद्रा सम्प्रति न युज्यते इस अस्वपद लौकिक विग्रह में निद्रा सु अति इस अलौकिक विग्रह में असम्प्रति अर्थ में समास होगा तथा निर्मक्षिकम् की तरह प्रक्रिया।

प्रत्यर्थम् – अर्थम् अर्थं प्रति इस अस्वपद लौकिक विग्रह में अर्थ अम् प्रति इस अलौकिक विग्रह में "अव्ययं विभक्तिसमीप....." इत्यादि सूत्र से यथार्थ के वीप्सा अर्थ में अव्ययीभावसमास करने पर समाससंज्ञा के पश्चात् "कृत्तद्धितसमासाश्च" से प्रातिपदिकसंज्ञा तथा "सुपो धातुप्रातिपदकयोः" सूत्र से सुब्लुक् करने पर अर्थ प्रति इस अवस्था में "प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम्" इस सूत्र से समासविधायक सूत्र में अव्ययपद के प्रथमानिर्दिष्ट होने से उपसर्जनसंज्ञा होने पर "उपसर्जनं पूर्वम्" सूत्र से प्रति का पूर्वनिपात होने पर प्रति अर्थ इस अवस्था में "इको यणचि" से यणादेश करके प्रत्यर्थ शब्द की पुनः प्रातिपदिकसंज्ञा करके प्रथमा एकवचन विवक्षा में सु–प्रत्यय करके प्रत्यर्थसु इस अवस्था में "नाव्ययीभावादतोऽम्त्वपञ्चम्याः" सूत्र से सु को अम्–भाव करके पूर्वरूपादिकार्य के पश्चात् प्रत्यर्थम् सिद्ध होता है।

यथाशक्ति – शक्तिम् अनतिक्रम्य इस अस्वपद लौकिक विग्रह में शक्ति अम् यथा इस अलौकिक विग्रह में "अव्ययं विभक्तिसमीप....." इत्यादि सूत्र से पदार्थानतिवृत्ति नामक यथार्थ में अव्ययीभावसमास करने पर समाससंज्ञा के पश्चात् "कृत्तद्धितसमासाश्च" से प्रातिपदिकसंज्ञा तथा "सुपो धातुप्रातिपदकयोः" सूत्र से सुब्लुक् करने पर शक्तियथा इस अवस्था में "प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम्" इस सूत्र से समासविधायक सूत्र में अव्ययपद के प्रथमानिर्दिष्ट होने से उपसर्जनसंज्ञा होने पर "उपसर्जनं पूर्वम्" सूत्र से पूर्वनिपात होने पर यथा शक्ति इस अवस्था में पुनः प्रातिपदिकसंज्ञा करके प्रथमा

एकवचन विवक्षा में सु–प्रत्यय करके "अव्ययीभावश्च" सूत्र से अव्ययीभाव समास की अव्ययसंज्ञा कर "अव्ययादाप्सुपः" सूत्र से सु का लोप करके यथाशक्ति सिद्ध होता है।

सचक्रम् – चक्रेण युगपत् इस अस्वपदविग्रह विग्रह में चक्र टा सह इस अलौकिक विग्रह में "अव्ययं विभक्तिसमीप...." इत्यादि सूत्र से यौगपद्य अर्थ में विद्यमान अव्यय सह का चक्रेण इस सुबन्त के साथ अव्ययीभावसमास–प्रातिपदिकसंज्ञा–सुब्लुक्–पूर्वनिपातादि प्रक्रिया पूर्ण करने के बाद सह चक्र इस अवस्था में "अव्ययीभावे चाऽकाले" इस सूत्र से सह के स्थान पर स–आदेश करने पर सचक्र बनने के बाद पुनः प्रातिपदिकसंज्ञा विभक्त्यादिकार्य सु के स्थान पर अम्–भावादि करके सचक्रम् रूप निष्पन्न होता है।

सक्षत्रम् – क्षत्राणां सम्पत्ति इस अस्वपदविग्रह विग्रह में क्षत्र आम् सह इस अलौकिक विग्रह में "अव्ययं विभक्तिसमीप...." इत्यादि सूत्र से सम्पत्ति अर्थ में विद्यमान अव्यय सह का क्षत्राणां इस सुबन्त के साथ अव्ययीभावसमास–प्रातिपदिकसंज्ञा–सुब्लुक्–पूर्वनिपातादि प्रक्रिया पूर्ण करने के बाद सहक्षत्र इस अवस्था में "अव्ययीभावे चाऽकाले" इस सूत्र से सह के स्थान पर स–आदेश करने पर सक्षत्र बनने के बाद पुनः प्रातिपदिकसंज्ञा विभक्त्यादिकार्य सु के स्थान पर अम्–भावादि करके सक्षत्रम् रूप निष्पन्न होता है।

द्वियमुनम् – द्वयोः यमुनयोः समाहारः इस लौकिक विग्रह में द्वि ओस् यमुना ओस् इस अलौकिक विग्रह में "नदीभिश्च" इस सूत्र से अव्ययीभावसमास करने पर समाससंज्ञा के पश्चात् "कृत्तद्धितसमासाश्च" से प्रातिपदिकसंज्ञा तथा "सुपो धातुप्रातिपदकयोः" सूत्र से सुब्लुक् करने पर द्वि यमुना इस अवस्था में यहाँ समासविधायकसूत्र "नदीभिश्च" सूत्र में अनुवर्तित संख्या पद प्रथमान्त होने के कारण "प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम्" इस सूत्र से संख्यावाचक द्वि शब्द की उपसर्जनसंज्ञा होने पर "उपसर्जनं पूर्वम्" सूत्र से पूर्वनिपात होने पर द्वि यमुना इस अवस्था में "अव्ययीभावश्च" सूत्र से अव्ययीभावसमास को नपुंसक विधान करके "ह्रस्वो नपुंसके प्रातिपदकस्य" सूत्र से यमुना के आकार को ह्रस्व करके द्वि यमुन इस अवस्था में पुनः प्रातिपदिकसंज्ञा करके प्रथमा एकवचन विवक्षा में सु–प्रत्यय करके "नाव्ययीभावादतोऽमत्वपञ्चम्याः" सूत्र से सु को अम्–भाव करके पूर्वरूपादिकार्य के पश्चात् द्वियमुनम् सिद्ध होता है।

उपजरसम् – जरायाः समीपम् इस अस्वपदविग्रह में जरा ङस् उप इस अलौकिक विग्रह में "अव्ययं विभक्तिसमीप....." इत्यादि सूत्र से अव्ययीभावसमास करने पर समाससंज्ञा के पश्चात् "कृत्तद्धितसमासाश्च" से प्रातिपदिकसंज्ञा तथा "सुपो धातुप्रातिपदकयोः" सूत्र से सुब्लुक् करने पर जरा उप इस अवस्था में "प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम्" इस सूत्र से समासविधायक सूत्र में अव्ययपद के प्रथमानिर्दिष्ट होने से उपसर्जनसंज्ञा होने पर "उपसर्जनं पूर्वम्" सूत्र से पूर्वनिपात होने पर उप जरा इस अवस्था में "अव्ययीभावे शरत्प्रभृतिभ्यः" सूत्र के अन्तर्गत गणसूत्र "जराया जरस्" से जरा शब्द को जरस् आदेश तथा समासान्त टच् प्रत्यय अनुबन्ध लोप होने पर उप जरस् अ इस अवस्था में सभी को मिलाकर समुदाय के अदन्त हो जाने पर उपजरस शब्द की पुनः प्रातिपदिकसंज्ञा करके प्रथमा एकवचन विवक्षा में सु–प्रत्यय करके "नाव्ययीभावादतोऽमत्वपञ्चम्याः" सूत्र से सु को अम्–भाव करके पूर्वरूपादिकार्य के पश्चात् उपजरसम् सिद्ध होता है।

अन्य सभी उदाहरणों की प्रक्रिया भी समान है।

बोध प्रश्न

क) बहुविकल्पीय प्रश्न –

1. सामर्थ्य होता है –

   (क) एक प्रकार का (ख) दो प्रकार का

   (ग) तीन प्रकार का (घ) चार प्रकार का

2. परार्थाभिधानम् को कहते है –

   (क) समास (ख) कृदन्त (ग) वृत्ति (घ) विभक्तिलोप

3. अव्ययीभावः यह अधिकार है –

   (क) तत्पुरुष से पूर्व (ख) बहुव्रीहि से पूर्व (ग) द्वन्द्व से पूर्व

   (घ) एकशेष से पूर्व तक–

4. समासविधायक सूत्र में जो प्रथमानिर्दिष्ट हो उसकी संज्ञा होती है –

   (क) पूर्वनिपात (ख) उपसर्जन (ग) समास (घ) अव्ययीभाव

5. अव्ययीभावे चाऽकाले सूत्र से होता है –

   (क) सह को स आदेश (ख) स को सह आदेश

   (ग) सह को लोप (घ) स का लोप

ख) रिक्त स्थानों की पूर्ति करें ।

1. प्रायेण .....ऽव्ययीभावो द्वितीयः।
2. अव्ययं विभक्ति..... साकल्यान्तवचनेषु।
3. नाव्ययीभावादतो.....।
4. ..... यथार्थाः।
5. तृणमप्यपरित्यज्य .....।

ग) सही/गलत का चयन करें ।

1. प्रायः उत्तरपदार्थप्रधान अव्ययीभाव होता है। सही/गलत
2. अधिहरि का अस्वपद विग्रह है "हरौ इति"। सही/गलत
3. "नदीभिश्च" सूत्र से विहित समास समाहार में ही इष्ट है। सही/गलत
4. "अनश्च" सूत्र से अन् का लोप होता है। सही/गलत
5. "नस्तद्धिते" सूत्र भसंज्ञक टि का लोप करता है। सही/गलत

अभ्यास प्रश्न

1. भूतपूर्व शब्द का लौकिक और अलौकिकविग्रह वाक्य लिखें।
2. "प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम्" इस सूत्र में 'समासे' शब्द से क्या अभिप्रैत है?
3. "तृतीया सप्तम्योर्बहुलम्" सूत्र किसका विधान करता है ?
4. समासान्त शब्द का क्या अभिप्राय है ? और यह किसके अवयव होते हैं ?

5. यथार्थों का सोदाहरण उल्लेख करें।

9.5 सारांश

इस इकाई के माध्यम से आपने सर्वप्रथम समास की परिभाषा तथा उसके प्रभेदों के लक्षणों तथा उदाहरणों के बारे में स्थूलतः परिचय प्राप्त किया। ततः पश्चात् अव्ययीभावादि विशेषसंज्ञा से विनिर्मुक्त केवलसमास जिसे कि सुप्सुपा–समास भी कहा जाता है का परिचय सोदाहरण प्राप्त किया। इसके बाद समास के पञ्चविधवृत्ति में अन्यतम होने के कारण वृत्ति के स्वरूप का परिज्ञान तथा लौकिक–अलौकिकादि विग्रहवाक्य का परिचय प्राप्त किया क्योंकि विग्रहवाक्यादि का ज्ञान किसी भी समस्तपद के ज्ञान तथा उसकी रूपसाधनप्रक्रिया हेतु अत्यन्त आवश्यक है। इसके बाद अव्ययीभावसमास प्रकरण का आरम्भ हुआ जिसमें आपने अव्ययीभावसमास विधायक सूत्रों का विशद अध्ययन किया। जिसमें मुख्य हैं – अव्ययं विभक्तिसमीप. सूत्र जो कि विभक्त्यर्थ–समीपार्थ–समृद्ध्यर्थादि 16 विभिन्न अर्थों में अव्ययीभावसमास का विधान करता है, उसी प्रकार नदीभिश्च सूत्र भी जो नदीविशेषवाची शब्दों के साथ सुबन्त का समास विधान करता है। तदुपरान्त समासोत्तर अवान्तर कार्य जैसे सुप् के स्थान पर नित्य तथा बहुलतया अम् भाव उसी प्रकार समासान्त प्रत्ययों का विधान इत्यादि सभी कार्यों का ससूत्र सोदाहरण विशदतया अध्ययन किया।

9.6 शब्दावली

केवलसमास– वह समास जिसका विधान "सुप् सुपा" सूत्र के द्वारा किया जाता है और यह अव्ययीभाव–तत्पुरुषादि की तरह किसी विशेषसंज्ञा से विनिर्मुक्त रहता है।

व्येपक्षासामर्थ्य – आकांक्षा आदि की दृष्टि से पदों में परस्पर सम्बन्ध को व्यपेक्षा कहते हैं। इस प्रकार का सामर्थ्य केवल वाक्य में होता है। जैसे – राज्ञः पुरुषः यहाँ राज्ञः (राजा का) ऐसा षष्ठ्यन्त कहने पर आकांक्षा होती है कि – किं (क्या) ? जो कि पुरुषः कहने पर शान्त होती है। उसी प्रकार पुरुषः कहने पर किसका इस तरह की परस्पर आकांक्षा उदित होती है।

एकार्थीभाव सामर्थ्य जहाँ पृथक्-पृथक् पदों की उपस्थिति एक साथ हुआ करती है वहाँ एकार्थीभावरूप सामर्थ्य होता है। जैसे – राजपुरुषः में राज्ञः और पुरुषः का एकार्थीभाव हुआ और दोनों पदों के मिलने से एकार्थ की प्रतीति हुई। जिन पदों में सामर्थ्य होता है उन्हीं में पदविधि होती है। तो इस प्रकार पदविधि का प्रयोजक सामर्थ्य हुआ और यह एकार्थीभाव सामर्थ्य कृत्तद्धितसमासैकशेष–सनाद्यन्तधातुरूप इन पञ्चवृत्तियों में होता ही है। इसके अभाव में कोई वृत्ति नहीं हो सकती।

वृत्ति – परार्थाभिधानं वृत्तिः यह वृत्ति का स्वरूप है। किसी दूसरे अर्थ का अभिधान (कहना) ही वृत्ति है। जैसे राजन् पद का अर्थ राजा है और पुरुष पद का अर्थ पुरुष, परन्तु दोनों में सामर्थ्यवशात् समासवृत्ति होने पर वह एक दूसरे ही अर्थ राजसम्बन्धीपुरुष का अभिधान करती है। यह वृत्ति पाँच प्रकार की है – कृत्–तद्धित–समास–एकशेष–सनाद्यन्तधातुरूप।

विग्रहवाक्य – वृत्ति के अर्थ के अवबोधक वाक्य को विग्रहवाक्य कहते हैं।

लौकिक विग्रह – लोक में परनिष्ठित रूप से प्रयोग करने योग्य जैसे – राजपुरुष का राज्ञः पुरुषः।

अलौकिक विग्रह – यह विग्रह केवल प्रक्रिया के निमित्त ही उपयोगी है। लौकिक विग्रह में प्रयुक्त विभक्ति को इसमें पृथक् दिखाया जाता है। जैसे – राज्ञः पुरुषः का राजन् ङस्. पुरुष सु।

अस्वपदविग्रह – यह विग्रह वहाँ दिखाया जाता है जहाँ नित्य समास हो अथवा जिसका लौकिक विग्रह वाक्य न हो। अर्थात् समस्यमान पदों से इतर (भिन्न) पदों (जोकि समास के घटक न हो) से जहाँ विग्रह प्रदर्शित किया जाए वहाँ अस्वपदविग्रह होता है। जैसे – अधिहरि में समस्यमान पद हैं "अधि और हरि", परन्तु विग्रह में हम "हरौ इति" ऐसा निर्देश करते हैं। यहाँ इति पद समास का घटक नहीं है।

उपसर्जन – यह एक संज्ञा का नाम है जिसका विधान "प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम्" सूत्र से किया जाता है। समास के विधायक सूत्र जो पद प्रथमाविभक्ति से निर्दिष्ट होता है उसकी उपसर्जन संज्ञा होती है।

पूर्वनिपात – उपसर्जनसंज्ञा जिसकी होती है उसका पूर्वनिपात किया जाता है अर्थात् समस्यमान पदों में से उपसर्जनसंज्ञा से युक्त पद का पूर्वप्रयोग करना ही पूर्वनिपात है।

वीप्सा – यथार्थ के जो चार अर्थ योग्यता–वीप्सा–पदार्थानतिवृत्ति–सादृश्य हैं उनमें वीप्सा का अर्थ होता है व्याप्ति। जैसे वृक्षं वृक्षं प्रति सिञ्चति कहते हैं तो उसका अर्थ है प्रत्येक वृक्ष को सींचता है। यहाँ व्याप्ति का अर्थ सकल रूप से व्याप्त करने की इच्छा से है। एक भी वृक्ष को न छोड़ते हुए। और जहाँ वीप्सा का प्रयोग होता है वहाँ "नित्यवीप्सयोः" सूत्र से द्वित्व अवश्य किया जाता है। इसीलिए वीप्सा के उदाहरण प्रत्यर्थम् के विग्रह में अर्थम् अर्थ प्रति यहाँ अर्थ शब्द का द्विप्रयोग किया।

पदार्थानतिवृत्ति – यथार्थ के जो चार अर्थ योग्यता–वीप्सा–पदार्थानतिवृत्ति–सादृश्य हैं उनमें अन्यतम है पदार्थानतिवृत्ति। पदार्थस्य अनतिवृत्तिः = पदार्थानतिवृत्तिः, न अतिवृत्तिः = अनतिवृत्तिः। इसका अर्थ है पदार्थ का अतिक्रमण न करना। जैसे यथाशक्ति। इसका तात्पर्य है शक्ति का अनतिक्रमण = शक्ति का अतिक्रमण न करते हुए। जितनी शक्ति उसके अनुसार यह फलितार्थ हुआ।

बहुलम् – कहीं प्रवृत्त होना, कहीं नहीं होना, कहीं विकल्प से होना और कहीं कुछ अन्य प्रकार से कार्य का सम्पन्न होना ही बहुल कहलाता है। जिसका प्रसिद्ध श्लोक है – क्वचित् प्रवृत्तिः क्वचिदप्रवृत्तिः क्वचिद् विभाषा क्वचिदन्यदेव। विधेर्विधानं बहुधा समीक्ष्य चतुर्विधं बाहुलकं वदन्ति।।

समासान्त – समासान्त एक विशेष प्रकार के प्रत्यय हैं। यह वह प्रत्यय हैं जो समास के अन्त में समाससमुदाय के अन्तावयव के रूप में युक्त होते हैं।

9.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. लघुसिद्धान्तकौमुदी आचार्यभीमसेनशास्त्रीकृत भैमीव्याख्यासहिता (द्वितीय भाग)

2. लघुसिद्धान्तकौमुदी – आचार्य सुरेन्द्रदेवस्नातकशास्त्रीकृत आशुबोधिनी हिन्दीव्याख्या सहिता
3. लघुसिद्धान्तकौमुदी – पं. ईश्वरचन्द्रकृत सोमलेखा हिन्दीव्याख्यासहिता
4. लघुसिद्धान्तकौमुदी – आचार्य अर्कनाथचौधरीकृत चन्द्रकला संस्कृतहिन्दी–व्याख्याद्वयसहिता

9.8 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न

क) बहुविकल्पीय प्रश्न

1. (ख), 2. (ग), 3. (क), 4. (ख), 5. (क)

ख) रिक्त स्थानों की पूर्ति

1. पूर्वपदार्थप्रधानो,
2. समीप–समृद्धि–व्यृद्ध्यर्थाभावाऽत्ययाऽसम्प्रति–शब्दप्रादुर्भाव–पश्चाद्–यथाऽऽनुपूर्व्य–यौगपद्य–सादृश्य–सम्पत्ति–,
3. ऽम्त्वपञ्चम्याः
4. योग्यतावीप्सापदार्थानतिवृत्तिसादृश्यानि
5. सतृणमत्ति

ग) सही/गलत का चयन

1. गलत 2. सही 3. सही 4. गलत 5. सही

अभ्यास प्रश्न

इन प्रश्नों के उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।